स्वयं के दोष एवं दूसरों के गुण देखें

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,

पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

भारतीय संस्कृति में पुरुषार्थ चतुष्टय की धारणा है। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष जीवन के चार पुरुषार्थ हैं। धर्म मानव को मानवता की शिक्षा देने का एक बहुत बड़ा साधन है। गुण और अवण्गुण सभी व्यक्तियों में होते हैं। किन्तु जो व्यक्ति अवगुणों को जीतकर गुणों का विकास कर लेता है, वह महापुरूष कहलाता है। धर्म गुणों को विकसित करने का मार्ग दिखलाता है। दोष अशुद्धि है गुण आत्मशुद्धि है। राग–द्वेष कषाय हैं। जैसे सोने को तपाकर कुन्दन बनाया जाता है वैसे आत्मा को तपाकर उसके ऊपर लगे हुए कर्म रजों को नष्ट किया जाता है। अशुद्धियों को दूर करके शुद्धता प्राप्त होती है। स्वयं के अन्दर जितने भी दोष हैं उन्हें दूर करने का प्रयास करना चाहिए।

दोषों को कैसे दूर किया जाये? यह एक बहुत बड़ा प्रश्न है। दोषों को दूर करने के लिए अन्तर्जगत में जाना आवश्यक है। आत्म की साक्षी से दोषों को देखें। सामायिक, प्रतिक्रमण, प्रत्याख्यान और प्रायश्चित के माध्यम से दोषों को दूर करना चाहिए। दिनभर हमने क्या किया ? सांयकाल इसकी आलोचना करनी चाहिए और आत्मा को साक्षी मानकर इसे दूर करने का प्रयास करना चाहिए। दोषों को देखना, उसकी आलोचना करना, प्रतिक्रमण करना चाहिए और प्रायश्ति के द्वारा जिन जीवों के प्रति विराधना हुई है उनसे क्षमा मांगना चाहिए। चौरासी लाख जीव यौनियों से क्षमा मांगना प्रायश्चित करना है। प्रायश्चित की विधि दोषों को दूर करने वाली है। सभी प्राणियों के प्रति मन, वचन और काया से यदि किसी प्रकार की गलती हुई हो तो मैं उन सभी से क्षमा प्रार्थना करता हूँ। यह वाक्य शुद्ध अन्तःकरण से होना चाहिए। सभी प्राणी शुद्ध अन्तःकरण से मुझे क्षमा प्रदान करें।

सुख–दुःख का क्रम जीवन में आता–जाता रहता है। सुख और दुःख में भावों को नहीं बिगाड़ना चाहिए। जैसा बीज बोया गया है उसका परिणाम अवश्य मिलेगा। इसलिए सदैव अच्छा कार्य करने का प्रयास करना चाहिए। सुख और दुःख का अन्तर्दर्शन क्या है ? इस

विषय पर चिन्तन किया जा रहा है। जो अनुकूल है वह सुख है और जो प्रतिकूल है वह दुःख है। सुख और दुःख मनुष्यकृत है। प्रायः लोग यह कहते हैं कि सुख और दुःख किसी दूसरे के द्वारा दिया जाता है किन्तु यदि गम्भीरता पूर्वक विचार किया जाये तो यह प्रतीत होता हैं कि सुख दुःख मनुष्य का अपना बोया हुआ है। दार्शनिक दृष्टि से देखा जाये तो आत्मरमण करना ही सुख है। इसके अतिरिक्त जितनी भी सांसारिक वस्तुएं हैं, वे सब दुःख स्वरूप है। मानव जब परायी वस्तु को अपना मान लेता है, तो उसे दुःख का मिलना स्वाभाविक है। वैभाविक जितनी भी प्रवृत्तियां है उनसे दुःख ही उत्पन्न होता है, किन्तु मानव उन्हें ही सुख स्वरूप मानता है। जैसे कुत्ता सुखी हुयी हड्डी को खाता हैं और स्वयं के मुख से निकले हुये रक्त को चाटकर सुख की अनुभूति करता है, वैसे ही यह सांसारिक सुख भी है। मानव माया स्वरूप इस संसार को सत्य मानकर के व्यवहार करता है। यह मेरा है, यह तेरा है, इसी में पूरे जीवन को बिता देता है। जो वास्तविक सुख है, उधर उसका ध्यान ही नहीं जाता। इसीका परिणाम है कि वह दुःख को सुख मान बैठता है और प्रसन्नता का अनुभव करता है।

गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने कहा हैं कि सूत्र में मोतियों की भांति यह सम्पूर्ण संसार मुझमें ही समाया हुआ है। जो मानव इस बात को स्वीकार कर आनन्द की अनुभूति करता है, वह तो सुख प्राप्त करता है, किन्तु जो अहंकारवश ईश्वर या परमात्मा को अन्यत्र खोजता है, उसे कही भी परमात्मा की प्राप्ति नहीं हो सकती। जैसे पानी और हिम एक ही है, केवल रूपान्तरण दिखाई देता है, वैसे ही आत्मा और परमात्मा एक ही है, केवल दृष्टि का अन्तर है। इसकी वास्तविकता यह है कि यह वास्तव में है ही नहीं। जिस प्रकार से रज्जु में सर्प की प्रतीति होती है किन्तु जब प्रकाश की सहायता से रस्सी का ज्ञान होता है, तो वहां सर्प नहीं रहता, केवल रज्जु ही रहती है, वैसे ही यह संसार है।

यथार्थ का ज्ञान होने पर सत्य की प्रतीति हो जाती है। दर्शन का सत्य यही है। प्रायः सभी दर्शनों में सुख और दुःख की मीमांसा की गई है और सभी दर्शनों ने इसके स्वरूप को जानने का प्रयास किया है। सभी दर्शनों का सत्य प्रायः समान ही है। रास्ते अलग–अलग है। जिस प्रकार से नदियां अनेक मार्गों से होती हुई अन्त में समुद्र में मिल जाती हैं, उसी प्रकार से

चिन्तन की धाराएं सभी दर्शनों की अलग–अलग हैं किन्तु अन्तिम सत्य सबका एक ही है। मोक्ष जो जीवन की अन्तिम अवस्था हैं वही पूर्ण सत्य है। इसको प्राप्त करने के लिए सभी दर्शनों ने अपने–अपने मार्ग बतलाये हैं।

भौतिकवादी दर्शन देहात्मवाद में विश्वास करता है अर्थात् देह को ही आत्मा मानकर के जीवन के लक्ष्य को प्राप्त करना चाहता है, किन्तु यह सुख भौतिक सुख है। प्रिय का मिलन और अप्रिय का संयोग सुख दुःख हो सकता है। इस संसार में सभी सुख की इच्छा करते हैं, दुःख कोई नहीं चाहता। लेकिन दुःख अपने आप मनुष्य के पास आ जाता है। इसका कारण यह है कि जो मनुष्य जैसा कर्म करता है उसे उसका फल सुख और दुःख के रूप में प्राप्त होता है। इसलिए स्वयं के दोषों को देखकर उसे दूर करना चाहिए।